दु:ख देवे दीवानगी

आध्यात्मिक साधना का परम सहयोगी - दु:ख

श्री प्राणनाथ जी की तारतम वाणी का पंचम पुष्प

:: प्रकाशक ::

श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान

Lord Prannath Global Consciousness Mission

दु:ख देवे दीवानगी

यह पुस्तिका गुजराती, अंग्रेजी, नेपाली और हिंदी में उपलब्ध हैं।

प्रकाशक :

श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान

Shri Prannath Global Consciousness Mission

संपर्क सूत्र ::

श्री निजानन्द आश्रम

नेशनल हाईवे नं ८ बायपास, सयाजीपुरा, वडोदरा 390019

Email : premseva7@yahoo.com; manulpdc@yahoo.com
Phones: 989-800-0168, 787-415-1371, 942-736-4535

श्री निजानन्द आश्रम

रतनपुरी, जिला मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश

Phone: 9811072951

श्री प्राणनाथजी मंदिर

शामळाजी, जि.अरवल्ली

Lord Prannath Divine Center, U.S.A/ Canada
914, 2nd Street, Macon, GA-31201
Email : jagni7@yahoo.com; jagnicorp@yahoo.com
Phones: 011-973-760-9238; 011-478-808-4079
Website: www.nijanand.org

श्री निजानन्द आश्रम, साढोली

पो. झबरेडा, जिल्ला. हरिद्वार, उत्तराखंड

Email : shrinetrapalji@gmail.com;
Website : anantshriprannath.com

मुद्रक :

दर्शन प्रिन्टर्स

५, रघुनाथ हिन्दी हाईस्कूल के सामने, मेम्को-बापुनगर रोड,

बापुनगर, अमदावाद। मो. ९७२५२ १९९०८ Email : darshan36212@gmail.com

:: अनुक्रमणिका :: :: पेज नं. ::

१. परब्रह्म परमात्मा प्रेम के स्त्रोत है, दुःख के नहीं। ०४

२. संसार दुःख का सागर है, कैसे ? ०६

३. अज्ञान से दुःख कैसे पैदा होता है ? ०८

४. अहंकार-दुःख कैसे देता है ? १०

५. आत्म-विस्मृतिः दुःख का मूल कारण है। ११

६. दुःख में दुःखी होना हमारी अपनी पसंदगी है। १३

७. अखण्ड आनंद-संसार के सुख और दुःख से परे है। १७

८. दुःख-परब्रह्म प्रियतम मिलन में निमित्त रुप अनमोल पदार्थ है। १८

९. दुःख से विरह, विरह से प्रेम और प्रेम से मिलन संभव है। २३

१०. दुःख और सुख के प्रति सजगता से प्रियतम से मिलन संभव है। २५

११. भय-मुक्त अवस्था में दुःख अति प्यारा लगता है। २६

१२. प्रियतम का लाड दुःख के रुप में भी मिलता है। २७

१३. प्रियतम परब्रह्म की कृपा से दुःखों को झेलने की क्षमता आना। २७

१४. दुःखों की मिठास के एहेसास मात्र से माया का लय। २८

१५. दुःख तो ब्रह्मात्माओं की शोभा श्रृंगार और साज-सज्जा है। २८

१६. श्री प्राणनाथजी का अभय वचन - संसार में रहते हुए परमधाम के सुखों का अनुभव होगा। २९

१७. श्री प्राणनाथजी संक्षिप्त परिचय ३१

१. परब्रह्म परमात्मा प्रेम के स्त्रोत है, दुःख के नहीं।

परब्रह्म परमात्मा प्रेम के महासागर है। वे हमें इतना अधिक चाहते हैं कि हमारे हर तरह के गुनाहों को न देखते हुए, हम पर सिर्फ अपनी मेहर या अपना लाड प्यार ही बरसाते हैं। उनकी और से दुःख तो कभी भी नही मिल सकता।

इस संदर्भ में सद्गुरु ऐक रोचक द्रष्टांत सुनाया करते थे। बनारस शहर की कई गलियों में दोनों तरफ दायें-बायें सिर्फ मिठाई और लड्डु ही की दुकानें होती है। यदि किसी वजह आमने सामने वाले दुकानदारों के बीच लडाई हो भी जायें, तो दोनों तरफ से सहज ही लड्डु और मिठाईयों की मारा मारी शुरु हो जाती है।

जहाँ लड्डु और मिठाई के अलावा और कुछ उनके पास है ही नहीं, तो लडे भी किस हथियार से ? थोडी ही देर में मिठाई फैंकनेवालेऔर मिठाई की मार खाने वाले दोनों अपने ही उपर हंसने लगते हैं।

साथियों ! ठीक ऐसा ही हुआ है प्रियतम परमात्मा और हम आत्माओं के बीच। वे हमें बिना प्यार के और कुछ दे ही नहीं सकते। लेकिन हमें मोह-माया के प्रभाव में उनके लाड प्यार समझ में नहीं आते हैं। जब ब्रह्मज्ञान द्वारा अंदर की आंखे खुल जाती है, तब दुःख में भी सुख ही सुख नजर आने लगता है।

प्रियतम प्राणनाथ स्वयं हमें इसी बात का अभय वचन देते हैं। आवश्यकता है सिर्फ ब्रह्म- वचनों को आत्मा के कानोंसे सुनने की।

प्रीतम मेरे प्राण के,
अंगना आतम नूर।
मन कलपे खेल देखते,
सो ए दुःख करुं सब दूर॥

श्री प्राणनाथ वाणी,कलश हि.२३/१७

"हे आत्माओं ! तुम मेरे प्राणों के प्रीतम हो। तुम मेरे नूरी दिव्य तन के अंग भी हो। संसारी खेल को देखकर तुम्हारे मन, जो दुःखी हो रहे हैं, उन सभी दुःखों को मैं अब दूर करदूँगा।"

मुख करमाने मन के,
सो तुमारे मैं ना सहूं।
ए दुःख सुख को स्वाद देसी,
तो भी दुःख मैं ना देऊं॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कलश हि.२३/१८

"हे आत्माओं ! मैं तुम्हारे मुरझाये हुए मुख और उदासीन मन को नहीं देख सकता। तुम यह निश्चित जान लो कि दुःख का यह अनुभव अंततः तुम्हें अखंड सुख का स्वाद करवाएगा। इस नश्वर भूमि के दुःखों की याद सत्य (अखण्ड) परमधाम में सुख ही का अनुभव करवाएगी। निज स्वरुप में जागने के बाद ये सब बातें तुम्हें बड़ी ही रसप्रद लगेगी।"

अब दुःख आवे तुमको,
तहां आडा देऊं मेरा अंग।
सुख देऊं भली भांतसों,
ज्यों होए न बीच में भंग॥

श्री प्राणनाथ वाणी,कलश हि.२३/३९

"अब तुम्हें जब भी कोई दुःख आएगा, तो वहाँ पर मैं आपका दुःख अपने ऊपर ले लूंगा, ताकि आपको

बहुत ही सहजता से और बिना किसी रुकावट के अखंड सुख मिल पाए।"

हम उपाया सुख कारने,
ए जो मांग्या खेल तुम।
दुःख दे वतन बोलावहीं,
ए इन घर नहीं रसम॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कलश हि.२३/२०

"यह खेल तो मैंने आप ही के मांगने पर और आप ही के सुख के लिए उपजाया है। अन्यथा, आपको दुःख देकर अपने वतन वापिस बुलायें, यह हमारे घर की रीत ही नहीं है।" आप सब यह क्यों नहीं समझते की, नमकीन खाने के बाद मिठा खाते हो तभी तो तुम्हें स्वाद की विविधता का सुख मिल पाता है ?

अतः यह दुःखरुपी भूमि अवश्य ही सत्यसुख की भूमि में परिवर्तित होगी। यह श्री प्राणनाथजी का वचन है।

२. संसार - दुःख का सागर है, कैसे ?

साथियों ! कहा जाता है कि सुख और दुःख जीवन रुपी एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और जीवन के अभिन्न अंग हैं। साधारण रुप से कष्ट, पीड़ा, दर्द, व्यथा और शोक आदि को दुःख और इससे विपरीत स्थिति को हम सुख कहते हैं। लेकिन सुख और दुःख का वास्तविक स्वरुप कुछ और ही है। यदि हम आध्यात्मिक क्षेत्र की इस वास्तविकता जान लें, तो निजानंद के द्वार सहज ही खुल सकते हैं, फलस्वरुप हम अपने आप को सच्चिदानंद प्रियतम परब्रह्म के हृदय की आनंदमयी लहर के रुप में पाते

हैं।

यदि हम अपने जीवन का निरीक्षण करते हैं या अपने आस-पास के संसार को देखें तो यही सत्य पाते हैं कि जीवन अनेक प्रकार के दुःखों से भरा हुआ है। चाहे वह दुःख शारीरिक हो या मानसिक, या इच्छाओं और अपेक्षाओं की परिपूर्ति न होने से पैदा होने वाले असंतोष से हो, या फिर प्राकृतिक हो। जन्म, बुढ़ापा, बिमारियां और मृत्यु का दुःख किसने नहीं देखा ? जगत की सदा परिवर्तनशील और नश्वर वस्तुओं को मोहवश पकड़े रखने से उत्पन्न मानसिक तनाव का दुःख किसने नहीं देखा ? हर चीज़ अपनी इच्छानुसार ही हो, अपनी मान्यता के अनुकुल हो, ऐसी अपेक्षा से पैदा होनेवाला दुःख क्या आपने नहीं देखा ?

विश्व आरोग्य संस्था (डबल्यु.एच.ओ) (W.H.O) के अनुसार विश्व में आज करीब ४० प्रतिशत से ज्यादा लोग मानसिक तनाव से बीमार हैं और करीब ९० प्रतिशत लोग डाक्टर्स के पास सिर्फ मानसिक तनाव की वजह से जाते हैं। सच ही में समग्र संसार के जीव दिन-रात विविध प्रकार के दुःखों की अग्नि में जलते रहते हैं। तारतम वाणी में श्री प्राणनाथ जी इस तथ्य की प्रस्तुति इस प्रकार करते हैं :

भवसागर जीवन को,
कि नपाया नाहीं पार।
दुःख रुपी अति मोहजल,
माहें धख्रत जीव संसार।।

श्री प्राणनाथ वाणी, ख्रिवलत ८/४२

"यह संसार मिथ्या है, स्वप्निल है। यहाँ आज तक किसी को भी अपने जीवन का वास्तविक सार, अखंड मुक्ति का मार्ग, नहीं मिल पाया है। यह संसार रुपी मोहजल का सागर दुःख ही दुःख से भरा हुआ है। इस में संसारी जीव दुःख की अग्नि में दिन-रात जल रहे हैं।"

अतः इस जीवन में सत्य सुख की प्राप्ति हेतु मनुष्य मात्र के लिये यही उचित है कि वह जगत की परिवर्तनशीलता और उसके मिथ्यत्व और आत्मा-परमात्मा के नित्यत्व के प्रति जाग्रत हो जाये।

दोस्तों ! यह बात विचारणीय है कि आज के हर तरह से प्रगतिशील युग में भी आख्रिर संसार दुःख की अग्नि में क्यों जल रहा है ?

३. अज्ञान से दुःख वैख्से पैदा होता है ?

दोस्तों ! दुःख का संबंध अपूर्णता, नश्वरता, खालीपन और क्षणभंगुरता से है। हम जो चाहते हैं उसके न मिलने से, जो नहीं चाहते उसके आ जाने से, और जो मिला हे उसके चले जाने से दुःख पैदा होता है।

जिस किसी चीज से हमें एक बार सुख मिलता है, उसमें हमारी आसक्ति बन जाती है और

उसे हम बार-बार पाना चाहते हैं । मोहवश हमारे मन में एक असंतोष रहा करता है । यह असंतोष ही शोक, व्यथा, निराशा, और हताशा के रुप में प्रगट होता है । फिर वह हमारी स्मृति के किनारे पर घूमा करता है और हमें अंदर से कहता रहता है कि मेरा कोई काम सही नहीं हो रहा या मेरी अपेक्षानुसार कुछभी नहीं होता । और तो और, जब कोई कष्ट न भी हो, तब भी असंतोष तो कायम रहता ही है । इस तरह हमारी अनियंत्रित लौकिक कामनायें दुःख के लिए कारणभूत बनती हैं ।

साथियों ! संसार में सुख तो है, लेकिन सदा रहने वाला सुख नहीं है । जब भी संसार का कोई प्राप्त सुख हमसे छिन जाता है, तो ऐसा सुख भी दुःख ही का अनुभव देता है । संसारी सुखों के इस अनित्य स्वभाव से अपरिचित रहने से दुःख पैदा होते हैं । धर्म शास्त्रों में संसार को दुःख का सागर कहने का यही प्रयोजन है । लेकिन यदि हम इस के प्रति जागरुक रहें तो दुःख हों या सुख, दोनों ही हमें दुःखी नहीं कर सकते।

किसी ने सच ही कहा है कि "हमारा अज्ञान ही इन अनियंत्रित इच्छाओं रुपी पेड़ की जड़ है और लोभ, गलत भावनाएं, क्रोध आदि अहंकार-जनित लक्षण इस पेड़ की शाखाएं हैं ।"

होता क्या है कि हमारी अनियंत्रित भौतिक इच्छाओं से लोभवृत्ति बढ़ती है । फिर इनकी परिपूर्ति

के लिए झूठ बोलना, धोखा देना और चोरी करना आदि गलत प्रवृत्तियां शुरु हो जाती हैं । उसके बाद धीरे धीरे गलत भावनाएं, चिंता, क्रोध और हिंसा आदि प्रकाश में आते हैं । ये सभी मिलकर हमारे वर्तमान सुख के अनुभव को भी बिगाड देते हैं । ऐसे में व्यक्ति विविध प्रकार के व्यसनों का शिकार भी बन जाता है, और अपने आप का ही नुकशान कर बैठता है । इस तरह दुःख की श्रृंखला शुरु हो जाती है ।

४. अहंकार-दुःख किस प्रकार देता है ?

साथियों ! मनुष्य को परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति इसलिये कहा गया है, क्योंकि उस के पास विवेक बुद्धि विकसित करने की क्षमता हैं । लेकिन वास्तविकता कुछ और ही नजर आती है कि मनुष्य सब से भयभीत प्राणी है, अन्य प्राणियों से उसका अहंकार भी बहुत बड़ा दिखाई देता है । अपनी विवेक बुध्धि को एक और रख कर वह भौतिक उपलब्धियों की अंधी दौड में सहज ही खो जाता है । दूसरों को दुःखी किये बिना सुखी होने के उपायों के बारे में वह इतना अज्ञात रह जाता है कि उसे अंततः और अधिक दुःख प्राप्त होते हैं । इस तरह वह स्वयं ही को धोखा दिये चला जाता हैं ।

हमारी विवेक बुध्धि स्वभाविक रुप से सुख ही की पसंदगी करती है, दुःख की नहीं । लेकिन जब हम दृश्य जगत को मिथ्या न मान कर इसके नाम-रुपात्मक द्रश्यों के आच्छादन में अपने छिपे हुये दिव्य स्वरुप को भूल बैठते हैं, तब हम अल्प सुख को नित्य सुख मान लेते हैं । जब हमारा मन

पंचभूतात्मक पदार्थों से आकर्षित होता है, तब इच्छा प्रगट होती है। फिर, इस इच्छा-पूर्ति से सुख और अपूर्ति से दुःख पैदा होते हैं।

इच्छापूर्ति के लिए हमारा अहंकारक मेंन्द्रियों को कार्यान्वित करता है। इसके फल स्वरुप यदि अहंकार को समर्थन मिलता है तो सुख, और यदि अहंकार तूटता है तो दुःख प्राप्त होता है। इस तरह, प्रमुख रुप से जागतिक पदार्थों का आकर्षण और अहम्-केन्द्रित ईच्छाओं से दुःख पेदा होता हैं।

अतः दुःख के क्षय के लिए अहंकारका क्षय होना आवश्यक हैं। और इसके लिए सरल और सहज स्वभाव, अंर्तद्वंद्वों से मुक्ति, जीवन की शक्तियों का सम्यक ज्ञान और कृतज्ञता भाव की अभिव्यक्ति आवश्यक है।

५. आत्म-विस्मृति-दुःख का मूल कारण

आत्म-खोजी साथियों ! दर असल अज्ञान ही दुःख का मूल कारण और सभी दुःखों की जननी है। सत्य को देख पाने की हमारी क्षमता का अभाव ही अज्ञान है। अज्ञान में ही हम गलतफहमी और भ्रम के शिकारबन जाते हैं और दुःखी होते हैं।

बृहत् आरण्यक उपनिषद में कहा गया है कि "आत्मा को जानने वाला अमर हो जाता है, और न जानने वालों का स्वागत करने के लिए दुःख तैयार खड़ा है।"

छान्दोग्योनिषद् में भी कहा गया है कि "जब

मनुष्य को सही (आत्मिक) दृष्टि प्राप्त होनी शुरु हो जाती है, तब उसे मृत्यु, बिमारियां और किसी भी प्रकारके दुःख से भय नहीं लगता।"

तारतम वाणी भी इस तथ्य को समझाती है।

विध दोऊ देखिए,
एक नाभ दूजा मुख।
गुंथी जालें दोऊ जुगतें,
मान लिए दुःख सुख॥

श्री प्राणनाथ वाणी,कलश हि. १६/३

"क्षर पुरुष आदि नारायण के नाभि कमलसे प्रगट विराट (सृष्टि) और उनके मुखारविंद से प्रगट वेद- इन दोनों से ऐसी उलझन भरी मायाजाल तैयार हुई है कि सबने इस जीवन में होने वाले अस्थायी सुख और दुःख के अनुभवों को ही वास्तविक मान लिया है। जब कि आत्म-जागृति लक्षी ज्ञान का अभाव ही वास्तविक दुःख है, और आत्मीय निज-सुख के प्रति जागरुकता ही वास्तविक सुख है। संसार के भ्रम में ही सब लोग अपने कर्मों के जाल को बुनते जाते हैं।"

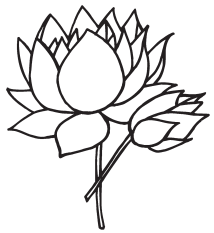

प्रियतम प्राणनाथ कहते हैं "इस संसार में सब को आत्मा झूठी लगती है और देह सच्ची। यहाँ पर व्यक्ति को आत्म-दृष्टि से न देखते हुए, सिर्फ देह की सगाई के हिसाब से देखा जाता है। यह जानते हुए भी कि भौतिक देह के अलावा दूसरा चेतन तत्व भी उसके साथ जुड़ा हुआ है, लोग जानबूझ कर देह से मोह करते हैं और अंततः दुःखी

होते हैं।"

अत: मूल बात यह है कि अपने आत्म-स्वरुप और अपनी शक्ति के मूल स्त्रोत से अलग हो जाने से ही हर प्रकार के दु:ख पैदा होने शुरु हो जाते हैं। आत्म-विस्मृति ही दु:ख का सबसे बड़ा कारण है। संसार को आत्मा की नजर से या अद्वैत प्रेम की नजर से देख पाने की क्षमता बना लेने पर किसी भी प्रकार का डर और दु:ख हमारे सामने टिक ही कैसे सकता है ?

६. दु:ख में दु:खी होना हमारी अपनी पसंदगी हैं।

साथयों ! यदि हम दो मिनिट आंखें बंध करके चिंतन करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि जीवन के सुख और दु:ख के प्रसंगो में सुखी या दु:खी होने का निर्णय हमारा अपना ही होता है। विवध प्रसंगों में कब किस बात या किस पहलू पर ध्यान देना है, उसकी पसंदगी हमारी अपनी होती हैं।

श्री प्राणनाथजी तारतम ब्रह्मज्ञान से इसी बात को और भी गहराई में जाकर समझाते हैं।

वस्तो गते दु:ख ना कछू,
जो पीछे फेरो दृष्ट।
जो देखो वचन जागके,
तो नाहीं कछु एक ष्ट।।

श्री प्राणनाथ वाणी, कलश हि. २३/२५

"यदि तुम आत्म-दृष्टि से देखोगे तो दु:ख का कोई वास्तविक अस्तित्व ही नहीं है। यदि

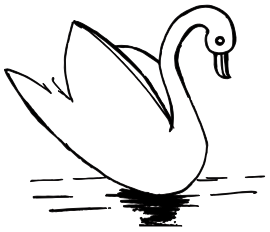

प्रियतम के वचनों को जाग्रत होकर सुनोगे तो तुम्हें कोईभी कष्ट नहीं होगा।"

संसार तो असत्य(परिवर्तनशील, नश्वर), जड़ (अचेतन) और दु:खमयी स्वभाव वाला है ही। अत: यहाँ दु:ख का अनुभव तो होना ही है। लेकिन किसी भी प्रकार के प्रसंगो में दु:खी होना या न होना यह हमारी अपनी पसंदगी होती हैं।

इस विषय में दलाई लामा का यह कहना तारतम वाणी से सुसंगत है कि दर्द तो होना ही है, लेकिन दु:खी होना या न होना तुम्हारे हाथ में हैं : "पैईन ईझ इनएवीटेबल, बट सफरिंग ईझ ओप्शनल।"(Pain is inevitable, but suffering is optional).

लगोगे जो दु:ख को,
तो दु:ख तुमको लागसी।
याद करो जो निज सुख,
तो दु:ख तुमथें भागसी।।

श्री प्राणनाथ वाणी, कलश हि. २३/२६

"इससे विपरीत, यदि इस माया के दु:खों की और ज्यादा ध्यान दोगे, तो ये दु:ख तुम्हें चिपके ही रहेगें। और यदि अपने निज-सुख को याद करके उसकी मस्ती में डूब जाओगे, तो दु:ख तुमसे कहीं दूर भाग जाएंगे।"

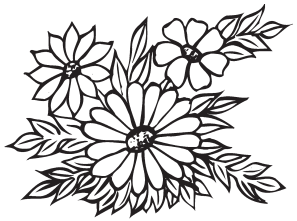

साथियों ! दु:ख तो वास्तव में दर्द का असर मात्र है। यदि हम दर्द को सहन करपाते हैं, तो दु:ख नहीं होता। जीवन के विविध प्रसंग सिर्फ दर्द को

पैदा करते हैं, लेकिन दु:ख नहीं। दु:ख तो प्रसंगों का मानसिक विरोध करने से ही पैदा होता है। जितना ज्यादा विरोध होता है, दर्द का दु:ख उतना ही गहरा होता जाता है। इस तरह दु:ख का कारण हमारे बाहर नहीं, बल्कि हमारे अंदर ही होता है।

धनी ना देवे दु:ख तिल जेता,
जो देखिए वचन विचारीजी।
दु:ख आपन को तो जो होत है,
जो माया करत हैं भारी जी॥

श्री प्राणनाथ वाणी, प्रकाश हि. २/६

"यदि हम तारतम ब्रह्मज्ञान के दिव्य वचनों पर गंभीरतापूर्वक विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रियतम धनी हमें तिल मात्र भी दु:ख नहीं दे सकते। हमें दु:ख का अनुभव तभी होता है, जब हम मायावी सुखों को आत्म-जाग्रति से ज्यादा प्राधान्य दे देते हैं। संसारी मोहजन्य बंधनों के तूटते वक्त (मायावी सुखों के छूटते समय) होने वाली निराशा ही हमें दु:ख देती है।"

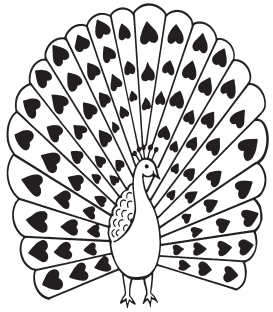

साथजी ! विविध प्रसंगो में हमारी प्रतिक्रियाओं द्वारा ही दु:ख या सुख का निर्धारण होता है। इस बात को समझने के लिए हम अपने आप के साथ एक छोटा सा प्रयोग कर सकते हैं। सुबह उठते समय आयने के सामने खड़े रहकर अपने आप से पूछें कि "दोस्त ! तुझे जीने के लिए एक और दिन मिला है। आज तुझे क्या चाहिए ? दु:ख या सुख और आनंद ? इनमें से तु अब ही

पसंद कर ले कि तुझे क्या चाहिए।" तो हमारे अंदर से अवश्य ही आवाज आयेगी कि "मुझे आनंद चाहिए।" कोई यह आवाज नहीं सुनेगा कि, "मुझे दु:ख चाहिए।" यह प्रयोग हर रोज करते रहिए। दु:ख की सृष्टि में भी हम आनन्द और सुख ही पसंद करते हैं, यह बात आप को दृढ होती जायेगी।

साथियों ! हमारी ऐसी पसंदगी का मूल कारण यही है की आत्मा के स्वभाव में मूलत: सुख और आनन्द ही होता है। हमारे मूल स्वभाव में दु:ख तो है ही नहीं। अत: प्रतिदिन सजग रहकर संसार को खेल के भाव से देखते हुए आनंद और सुख ही को पसंद करें। जो सत्य, चेतन और आनन्दमयी प्रियतम परमात्मा है, उनको दिल में आमंत्रित करें।

आकर्षण का नियम भी कहता है कि, "हम जो सोचते हैं, मानते हैं, वही हमारे जीवन में आकर्षित होता है।" यदि हम अज्ञानतावश दु:ख और संसार की समस्याओं के प्रति ज्यादा ध्यान देंगे, तो दु:ख होना निश्चित है। लेकिन ज्ञान के प्रकाश में यदि हम अपनी आत्मा को देखते हुए यह ध्यान करते हैं कि "मैं अखंड हूँ, पूर्ण हूँ, शाश्वत हूँ, शक्तिमान हूँ, प्रेम का स्वरुप हूँ, आनंद, उत्साह से परिपूर्ण हूँ और सुखी हूँ" तो दु:ख हमारे निकट आ ही कैसे सकता है ? साथियों ! इस प्रकार का ध्यान काल्पनिक नहीं हैं। इस प्रयोग को नियमित रुप से

क रतेरहिये और फि रदेखें कि क्या फ लमिलता है।

७. अखण्ड आनंद-संसार के सुख और दुःख से परे है।

हम दुःख और सुख से परे अखंड आनंद की ओर जा पायें इसके लिए श्री प्राणनाथजी हमें हमारी आत्मा के मूल आनंद स्वरुप की पहचान क राते हैं। वे याद दिलाते हैं कि हमारे दिव्य तन, जिसे 'पर-आत्म' क हते हैं, प्रियतम परब्रह्म के श्री चरणों में विराजमान हैं। वहाँ बैठक र ही हम अपनी पसंदगी से सूरता (ध्यान) द्वारा इस स्वप्निल संसार में दुःख का खेल खेलने आये हैं; हम दुःखी होने के लिए नहीं आये हैं। दुःख के अनुभव द्वारा नित्य सुख का स्वाद लेने ही हम संसार में आये हैं।

श्री प्राणनाथजी क हते हैं कि संसार के दुःख वास्तव में दुःख है ही नहीं। इतना ही नहीं, यहाँ के सुख भी सच्चे सुख नहीं हैं। क्योंकि इन दोनों का अस्तित्व क्षणभंगुर है।

सहेजल सुख तुमें है सदा,
अलप नहीं असुख।
तुम सुख का स्वाद लेने,
खेल मांग्या ए दुःख॥

श्री प्राणनाथ वाणी, क लश हि. २३/२१

"परमधाम में तो सदा से ही सहज सुख हैं, वहां असुख, यानि कि दुःख का नामोनिशान नहीं है। साथियों ! सुख का एक नया स्वाद लेने के लिए ही तुमने दुःख का यह खेल मांगा है। आप यदि अपने

ध्यान को परमधाम में वापिस लगा क र देखोगे तो हकीक त में दुःख का कोई अस्तित्व ही नहीं रह जायेगा।"

दुःख रुपी इन जिमी में,
दुःख ना क ाहू देखत।
बात बड़ी है मेहर की,
जो दुःख में सुख लेवत॥

श्री प्राणनाथ वाणी,सागर १५/९

"प्रियतम परब्रह्म की वास्तविक मेहर जिस आत्मा पर बरस रही हो, उसको इस दुःख रुपी संसार में क हीं भी और कि सी भी परिस्थिति में दुःख का अनुभव नहीं होता है। क्योंकि दुःख में क ारणभूत उसक ा तृष्णा का बंधन टूट गया होता है। वह आत्मा दुःखों के डर से कभी भी विचलित नहीं होती। प्रियतम की मेहर की विशेषता ही यह है कि उस में भीगी जाग्रत आत्मा दुःख में भी अखंड सुख का अनुभव क रती है।"

८. दुःख-परब्रह्म प्रियतम मिलन में निमित्त रुप अनमोल पदार्थ है।

वास्तव में अपनी आत्मा से और अपने अस्तित्व के मूल स्त्रोत से अलग हो जाने से ही हर प्रक ार के दुःख पैदा होने शुरु हो जाते हैं। अतः आत्म-विस्मृति ही सबसे बडा दुःख है। इस बात का ज्ञान हो जाने पर प्रियतम परब्रह्म की जुदाई ही आत्मा का सच्चा दुःख बन जाती है। जैसे एक मछली अपने जीवन-प्राण समान जल के बिना

तडपती है, ठीक वैसे ही प्रियतम परमात्मा की पहचान कर लेने वाली आत्मा हमेशां उनसे मिलने को तडपती रहती है । इस विरहाग्नि के बीच उसे संसारी दु:ख और सुख नगण्य लगते हैं । उसके सामने किसी भी प्रकार का भय टिक ही नहीं सकता। सत्य के लिए वह किसी भी प्रकार का दु:ख सहन करने को तैयार रहता है।

साथियों ! ज्ञान की इस प्रकार की स्थिति में दु:ख हमारी प्रेम-साधना में परम सहयोगी बन जाता है। हमारी आत्मा प्रियतम के विरह में निर्मल होकर जब अतूट आत्म बल प्राप्त कर लेती है, तब वह इस प्रकार की अलग ही बातें गुनगुनाने लगती है :

दु:ख रे प्यारो मेरे प्रान को,
सो मैं छोड्यो क्यों कर जाए,
जो मैं लियो है बुलाए ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,किरंतन १६/१

"नश्वर संसार के जिन दु:खों से मैं अपने प्रियतम प्राणनाथ के श्री चरणों में पहुंच पायी हूँ, वे दु:ख तो मुझे अति प्यारे हैं - मेरे प्राणों से भी प्यारे हैं । इन्हें मैं छोड़ ही कैसे सकती हूँ ? इन दु:खों को तो मैंने प्रियतम धामधनी जी से माँगकर लिये हैं।"

दु:ख प्यारो है मुझ को,
जासों होए पियु मिलन।
कहा करुं मैं तिन सुख को,
आखिर जित जलन ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,किरंतन १७/६

"साथियों ! मुझे दु:ख इसलिए प्यारा लगता है, क्योंकि इससे प्रियतम परब्रह्म का मिलन हो सकता है । मैं नश्वर संसार के झूठे सुखों को लेकर क्या करुं, जिनका उपभोग करने के पश्चात् चिन्ता व पश्चाताप की अग्नि में जलना निश्चित है।"

इन अवसर दु:ख पाइए,
और कहा चाहियत है तोहे।
दु:ख बिना चरन कमल को,
सखी कबहूं न मिलिया कोए।।

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १६/२

"इस आत्म-जागनी के वर्तमान समय में प्राप्त जीवन में यदि दु:ख मिल भी जाता है, तो फिरउसके अतिरिक्त तुम्हें और क्या चाहिये ? हे सखी ! दु:ख के भय से मुक्त हुए बिना आज तक किसी को भी परब्रह्म परमात्मा के चरण कमल प्राप्त नहीं हुए हैं।"

दु:ख की प्यारी प्यारी पिउ की,
तुम पूछो वेद पुरान।
ए दु:ख मोही को भला,
जो देत हैं अपनी जान ।।

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १६/६

"जिस ब्रह्मात्मा को संसार के दु:ख प्यारे लगते है, अर्थात जो अपने प्रेम के बल से दु:खों को अपना साथी बना लेने वाली है, वही अपने प्रियतम की प्यारी अंगना है । साथियों ! यदि इस बात की साक्षी चाहते हो तो तुम वेद-पुराण आदि धर्मग्रंथो में

देख सकते हो। मुझे तो संसार का दुःख ही प्रिय लगता है। क्योंकि मेरा यह दृढ़ विचार है कि खेल देखने की हमारी मनोकामनाएं पूरी करने के लिए ही प्रियतम मुझे अपनी अंगना जानकर यह दुःख दे रहे हैं।''

बड़ी मत के जो धनी कहे,
होए गए जो आगे।
तिन भी धनी मिलन को,
दुःख धनी पें मांगे॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/७

''आगे भी संसार में अनेक बड़े-बड़े बुध्धिमान संत व महापुरुष हुए। उन्होंने भी परब्रह्म परमात्मा के मिलन के लिये दुःख की महिमा बड़े प्यार से गायी है, और दुःख ही माँगा है।"

कुरानपुरान मैं देखिया,
कहीदुःख कीबड़ाई।
साधो बड़ों बड़ाई दुःख की,
लड़ाए लड़ाए के गाई॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/२६

''कुरान व पुरान आदि ग्रंन्थो में भी दुःख ही की महिमा है। विचारणीय है कि महान पुरुषों ने अखंड सुख के वास्ते दुःख को चाहा है, फिर भी संसारी लोग दुःख कभीनहीं चाहते।''

ता कारनदुःख देत हैं,
दुःख बिना नींद न जाए।
जिन अवसर मेरा पिउ मिले,
सो अवसर नींद गमाए॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १६/७

''प्रियतम परमात्मा अपनी प्रिय आत्माओं को दुःख इसलिये देते हैं, क्योंकि दुःख का अनुभव किये बिना आत्मा अखण्ड सुख के प्रति जाग्रत नहीं होती, अर्थात् उसकी मोह और अज्ञानरुपी निद्रा दूर नहीं होती। जिन दुःखो के विविध अवसर द्वारा इसी जीवन में प्रियतम धनी का मिलन हो सकता है, ऐसे शुभ अवसरों को हम अज्ञानरुपी निद्रा में कैसे गँवा दें?"

दुःख बिना न होवे जागनी,
जो करेकोटउपाए।
धनी जगाए जागहीं,
ना तो दुःख बिना क्योंए न जगाए॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/१४

''चाहे कोई करोड़ों यत्न कर ले, परन्तु जागरुक होकर दुःख को समझे बिना आत्म-जाग्रति नहीं हो सकती। या फिर धामधनी ही ऐसी विशेष कृपा कर दें, तभी बिना दुःख के अनुभव किये ही आत्मा जाग्रत हो सकती है। अन्यथा, दुःख बिना अज्ञान रुपी निद्रा से किसी भी तरह से जाग्रति संभव नहीं है।''

दु:ख देवे दिवानगी,
श्यानप देवे उड़ाए ।
ताथें दु:ख कोईना लेवहीं,
सब सुख श्यानप चाहें ।।

श्री प्राणनाथ वाणी, कि रंतन १७/३१

''दु:ख प्रियतम धणी को पाने की दीवानगी देता है । और सांसारिक बुद्धि की चतुराई को समाप्त कर देता है । इसलिये दु:ख कोई भी लेना नहीं चाहता । सब कोई संसार के मायावी सुखों और चतुराई में मस्त रहना चाहते हैं ।''

१. दु:ख से विरह, विरह से प्रेम और प्रेम से मिलन संभव है ।

दुखतें विरहा उपजे,
विरहे प्रेम इश्क ।
इश्क प्रेम जब आइया,
तब नेहेचे मिलिए हक ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,कि रंतन १७/१६

"साथियों ! होता क्या है कि जब हमें आत्म-पहेचान हुई हो और यदि इस बीच दु:ख आ भी जाता है, तो उस दु:ख से हम दु:खी नहीं होते हैं । बल्कि, दिल में प्रियतम परब्रह्म से मिलने की तडप व आत्म-विरह उत्पन्न होता है । और सच तो यही है कि विरह से ही हृदय में सच्चा प्रेम पैदा होता है । जिससे आत्मा प्रियतम के दिल में छिपे गंजानगंज इश्क के महासागर से जूड जाती है । जब आत्मा के दिल में प्रियतम के इश्क के प्रति इस प्रकार अनन्य

प्रेम उमडता है, तब निश्चित रुप से आत्मा का अपने प्रियतम से मिलन हो जाता है ।"

जब बिछोहा धनी का,
तब दु:ख में धनी विलास ।
उन दु:ख के विलास में,
पोहोंचाए देत धनी आश ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,कि रंतन १७/८

''जब अन्तरमन में धामधनी का वियोग बना रहता है, तब सांसारिक दु:ख के प्रसंगो में भी आत्मा अपने प्रियतम के विलास का आनंद ले लेती है । उन दु:ख के प्रसंगो में उत्पन्न विरह-व्यथा में आत्मा धाम-धनी से विलास का निरन्तर चिन्तन करती रहती है । ऐसी दशा में उसकी दृढ आशा ही उसे प्रियतम धामधनी के श्री चरणों तक पहुंचा देती है ।"

दु:ख सब सुपनों हो गयो,
अखण्ड सुख भोर भयो ।
महामत खेले अपने लाल सों,
जो अक्षरातीत कह्यो ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,कि रंतन १६/१२

''जिस प्रकार स्वप्न तूटने के बाद सपने में दिखाई देनेवाला सब कुछ समाप्त हो जाता है, कुछ शेष नहीं बचता, उसी प्रकार विरह के रस में मेरे लिए सांसारिक दु:ख भी समाप्त हो गये हैं । अब मेरे हृदय में परमधाम के अखंड सुख का प्रभात उदय हो गया है । मैं महामति अपने अक्षरातीत प्रियतम धनी से प्रेममयी आनंद लीला के विलास में मग्न हो गई हूँ ।"

१०. दुःख और सुख के प्रति सजगता से प्रियतम से मिलन संभव है।

दुनी के सुख दिए मैं तिनको,
जो कोई चाहे सुख।
जिनसे मेरा पिउ मिले,
मैं चाहूं सोई दुःख॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कि रंतन १७/५

"जाग्रत आत्मा की अनोखी सोच तो देखो वह कहती है, "प्रियतम की पहचान की बातें सुनने के बावजूद भी, जिस किसी को सांसारिक सुखों की चाहना रह गयी हो, उन्हें वह सुख देने को मैं सदा तत्पर हूँ। लेकिन अपने खुद के लिए तो मैं केवल वही दुःख चाहती हूँ, जिससे मुझे मेरा प्रियतम मिल जाये।"

दुःख से पिउजी मिलसी,
सुखें न मिलिया कोए।
अपने धनी का मिलना,
सो दुःखै से होए॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कि रंतन १७/१०

"दुःख में जागृति बनाये रखने पर प्रियतम अवश्य ही मिल जायेंगें। संसारिक सुखों में रच-पच कर, अर्थात, माया में बेहोश हो जाने पर, प्रियतम से कोई भी मिल नहीं पाया है। यह निश्चित जान लो कि दुःख के प्रति सजग रह कर ही अपने प्रियतम धनी अक्षरातीत से मिलना संभव है।"

११. भय-मुक्त अवस्था में दुःख अति प्यारा लगता है।

इन दुःख से कोई जिन डरो,
इन दुःख में पिउ को सुख।
जो चाहत हैं सुख को,
आखिर तिन में दुःख॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कि रंतन १७/१३

"साथियों ! इस संसार के क्षणिक दुःखों से कभी भी किसी को कभी भी नहीं डरना चाहिये। इन दुःखों में ही प्रियतम धनी का अखंड सुख छिपा हुआ है। जो लोग संसार का विषयी सुख मात्र चाहते हैं, उन्हें अंत में जन्म-मरण, जरा-व्याधि का दुःख भोगना ही पड़ता हैं।"

दुःख दशों द्वार भेदया,
और दुःख भेदयो रोम रोम।
यों नख शिख दुःख प्यारो लगे,
तो काहा करे छल भोम॥

श्री प्राणनाथ वाणी, कि रंतन १७/२१

"साथियों ! इस दुःख ने मेरे शरीर के दसों द्वारों को बन्द कर मेरे रोम-रोम में प्रवेश कर लिया है। इसलिए नख से लेकर शिख तक मुझे दुःख ही अति प्यारा लगने लगा है। ऐसी भय-मुक्त अवस्था में भला संसार के छल कपट आदि मेरा बिगाड़ भी क्या सकते हैं ?"

१२. प्रियतम का लाड ही दुःख के रुप में मिलता है।

जो साहेब सनकूलहोव हीं,
तो दुःख आवे तिन।
इन दुनिया में चाह कर,
दुःख ना लिया कि न॥

श्री प्राणनाथ वाणी,किरंतन १७/३०

"वास्तव में प्रियतम धामधनी जिन आत्माओं पर रीझते हैं, उनकोही इस माया में दुःख मिलता है। अन्यथा, इस संसार में अपनी इच्छा से किसी ने भी दुःख नहीं लिया।"

मदर टेरेसा ने भी इस संदर्भ में यह कहाहै, जो तारतम वाणी के अनुकूल है: "दुःख के जंगल से मुक्त होने काएक मात्र मार्ग- क्षमा है, और दुःख तो परमात्मा का आत्मा को चुम्बन है। इससे बढ़िया और हो ही क्या सकताहै ?"

१३. प्रियतम परब्रह्म की कृपा से दुःखों को झेलनी की क्षमता आना।

मैं तो चाह्या सुख को,
पर धनी कीमुझ पर मेहेर।
ताथें दुःख फेरफेरलिया,
अब सुख लगत है जेहेर॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/२९

"मैं तो पहले यही चाहती थी कि संसार में हर प्रकारसे सुखी रहूँ। परंतु धामधनी ने मुझ पर विशेष कृपाकरदी, जिससे में बार बार दुःखो कोझेलने में

सक्षम बन पायी। अब दुःख के इन प्रयोगों में से सफलतापूर्वक बाहर आ जाने पर मुझे संसार के क्षणिक सुख विष के समान लगने लगे हैं।"

१४. दुःखों की मिठास के एहेसास मात्र से माया का लय।

बारीक बातें दुःख की,
जो कदीलगे मिठास।
तो टूट जात है ए सुख,
होत माया कोनाश॥

श्री प्राणनाथ वाणी,किरंतन १७/२३

"दुःख की बातें बड़ी ही सूक्ष्म हैं। यदि हमें इन दुःखों में से फलित होने वाली मिठास काएक बार अनुभव हो जाये तो संसार के क्षणिक सुख प्राप्त करने की इच्छा और माया हृदय से स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।"

१५. दुःख तो ब्रह्मात्माओं की शोभा श्रृंगार और साज-सज्जा है।

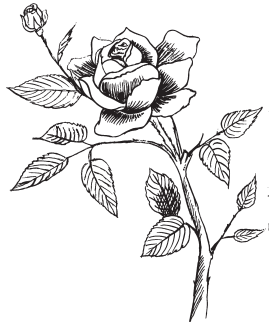

चाहन वाले दुःख के,
दुनियां में ढूंढ देख।
ब्रह्मांड यारहै सुख का,
दुःख दोस्त हुआ कोईएक॥

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/३२

"इस संसार में सर्वत्र ढूँढने पर भी दुःख को चाहने वाले कोई भी नहीं मिलते। सभी लोग मायावी सुखों कोही चाहते हैं। दुःख के साथ प्रेम करनेवाली कोईएक विरली आत्मा ही मिलेगी।"

दु:ख शोभा दु:ख सिनगार,
दु:खै को सब साज ।
दु:ख ले जाए धनी पे,
इन सुख तें होत अकाज ।।

श्री प्राणनाथ वाणी, किरंतन १७/१७

"साथियों ! इस तथ्य को समझ लें कि दु:ख एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है । दु:ख ही ब्रह्मात्माओं की शोभा, श्रृंगार और साज सज्जा है । जब दु:ख ही धामधनी तक पहूँचाता है, माया के क्षणिक सुखों में फँसे रहने से आत्मिक सुख नहीं मिलता है, और इससे बड़ा ही अनर्थ हो जाता है ।

जाको स्वाद लग्यो कछु दु:ख को,
सो सुख कबूं न चाहे ।
वाको सो दु:ख फेरफेर,
हिरदे चढ़ चढ़ आए ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,किरंतन १७/३३

"जिस किसी आत्मा को दु:ख का सच्चा स्वाद लग जाता है वह कभी भी माया का क्षणिक सुख नहीं चाहता । दु:ख (विरह) से प्राप्त सुख उसके दिल में बार - बार याद आते रहते हैं । अत: वह दु:ख की कामना पल पल करती रहती हैं ।" इस प्रकार विरहाग्नि पैदा होने से प्रेम प्रकट होता है और फल स्वरुप उस आत्मा का प्रियतम धनी से मिलन होता है ।"

१६. श्री प्राणनाथजी का अभय वचन संसार में रहते हुए परमधाम के सुखों का अनुभव

पिउ जगाई मुझे एक ली,
मैं जगाऊं बांधे जुथ ।
ए जिमी झूठी दु:ख की,
सो करदेऊं सत सुख ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,कलश हि. २३/४४

"श्री प्राणनाथ पिया जी ने मुझे अकेले को ही जगाया, अब मैं बहुत सारी आत्माओं के जूत्थों को अपने परमधाम की मूल बातें सुना कर, पचीस पक्षों की शोभा दर्शाकर और वहाँ के अखंड सुखों की लज्जत देकर, जगाउँगी । ऐसा करके इस दु:ख रुपी भूमि को सत्य सुख की भूमि में परिवर्तित करदूँगी । जब मैं सब सुंदरसाथ को अपने समान जाग्रत कर दूँगी, तभी मैं हकीकतमें जाग्रत कहलाउँगी।

अब ल्यो रे मेरे साथ जी,
इन जिमी ए सुख ।
मैं तुमारे ना सेहे सकों,
जो देखे तुम दु:ख ।।

श्री प्राणनाथ वाणी,कलश हि. २३/३२

"साथजी ! अब आप इस संसार में बैठ कर उस परमधाम के सुखों का अनुभव करो । आप सबने जो दु:ख देखें हैं, वे मुझसे सहन नहीं होते । अब मैं इस मोह सागर की लहरों से तुम्हें बचाकर, आपके हर तरह के माया के विकारों को मिटा दूँगा । आपको पूर्ण पहचान करा कर, आपके अंगों से अखण्ड प्रेम के विविध रस उपजाऊंगा । फिर आप सब को सुख पूर्वक ईलम, इश्क और ईमान से सजे हुए निस्बत के नूरी सुखपाल में बिठा कर निश्चित रुप से अपने घर परमधाम ले जाऊंगा ।"

:: श्री प्राणनाथजी संक्षिप्त परिचय ::

अनन्त सृष्टियों के अस्तित्व के जो मूल आधार हैं, सभी आत्माओं के जो एक मालिक हैं, सर्व शक्तियों के जो मूल स्त्रोत हैं, ऐसे प्रियतम परमात्मा ही प्राणनाथ हैं। जी हाँ, हम सभी उस आनंद स्वरुप सच्चिदानन्द प्रियतम रुपी सागर की लहरें हैं, आत्मायें हैं। आध्यात्मिक मार्ग में इस प्रकार का परस्पर आत्मीयता का भाव निहीत होता है। सम्पूर्ण मानव जाति को एकात्म-भाव से, दिव्य प्रेम की तार से जोड़ना ही धर्म का वास्तविक उद्देश्य है।

साथियों ! संसारी खेल में प्रियतम प्राणनाथ सत्य और असत्य की पहचान करा कर संसार को एक सूत्र में जोड़ने हेतु ब्रह्मज्ञान लेकर पधारे हैं। इसे तारतम वाणी भी इसलिए कहते हैं, क्योंकि यह दिव्य ज्ञान, मोह माया के अज्ञानरुपी अंधकार को चीर कर परम आनन्ददायी दिव्य प्रकाश की ओर ले जाने वाला है।

श्री प्राणनाथ जी (श्री जी) के श्रीमुख से अवतरित यह वाणी श्री कुलजम स्वरुप महाग्रन्थ के रुप में स्थित है, जो वर्तमान संसार को मिली हुई अनमोल आध्यात्मिक संपदा है। इसमें संसार के समस्त धर्मग्रन्थों में निहित सत्य ज्ञान के रहस्यों को स्पष्ट करके उनका एकीकरण किया गया है। इसमें विशेष रुप से उन अनादि आध्यात्मिक प्रश्नों का जैसे कि - मैं कौन हूँ ? कहां से आया हूँ ? मेरा प्रियतम कौन है ? आदि का निराकरण किया गया है। श्री जी फरमाते हैं कि मनुष्य मात्र प्रियतम परमात्मा की आत्म-प्रिया है, उनकी आत्म-अंगना है। इस भाव को दृढ कर लेने से आत्मा अपने प्रियतम परमात्मा का सुख ले सकती है।

तारतम ज्ञान का इस ब्रह्मांड में अवतरण सन् १६२१ ई. में हुआ, जब परब्रह्म अक्षरातीत ने अपने आवेश स्वरुप से श्री निजानन्द स्वामी धनी श्री देवचन्द्रजी (१५८१-१६५४) को दर्शन दिया। वही बीजरुप ज्ञान आगे चलकर श्री कुलजम स्वरुप रुपी वटवृक्ष बन गया, जो आज संसार को सुख शीतलता प्रदान कर रहा है। श्री कुलजम स्वरुप में निहित ब्रह्मज्ञान का अवतरण १६५९ ई. (नौतनपुरी, जामनगर) से १६९२ ई. (पन्ना, म.प्र.) तक ३३ वर्ष के समयावधि आत्म-जागृति यात्रा के दरम्यान अलग-अलग जगह पर हुआ। इसमें कुल १८,७५८ चौपाईयां हैं, जो १७ रत्नरुप ग्रंथों में प्रस्तुत हैं। निज-आनन्द(शाश्वत सुख) के पथ पर अग्रसर आत्मखोजी के लिए तो यह वाणी सच्चिदानन्द परब्रह्म अक्षरातीत का ज्ञानमयी स्वरुप ही है।

इस वाणी में जो 'महामति' की छाप है, वह प्रियतम परब्रह्म की महानतम दिव्य शक्तियों का सामूहिक स्वरुप है। मिहिरराज ठाकुर (१६१८-१६९४ ई.) जिनका लौकिक नाम है, पांच शक्तियां विराजमान होने से वे प्रियतम परब्रह्म की मेहर से 'महामति' पद की शोभा प्राप्त करते हैं और इनके तन में विराजमान परब्रह्म अक्षरातीत की शक्ति की पहचान कर लेने वाला 'सुन्दरसाथ' समुदाय उन्हें प्राणनाथ कह कर संबोधित करता है, यथार्थ में क्षर पुरुष एवं अक्षरब्रह्म से परे अक्षरातीत परब्रह्म ही प्राणनाथ है।

जामनगर राज्य (गुजरात) में दीवान पद पर आसीन मिहिरराज ने अपने सद्गुरु निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्र जी (१५८१-१६५४ ई.) की प्रेरणा से भौतिक सुखों को त्याग कर आत्म-जागृति अभियान का महासंकल्प लिया। बारह साल की आयु में वे अपने सद्गुरु के चरणों में आये और तारतम ज्ञान प्राप्त किया। अद्वैत प्रेम के स्वरुप की पहचान करके स्वयं सेवा, समर्पण और प्रेम की मूर्ति बन गये। आध्यात्मिकता को अपने जीवन के केन्द्र में रख कर ही उन्होंने अपना कुटुम्ब धर्म, समाज धर्म, देश धर्म और मानव धर्म निभाया। उन्होंने मानवतावादी दृष्टि से प्रत्येक मानव में निहित आत्म-चेतना को परमात्म-चेतना से जोड़ा। व्यक्ति, समाज, धर्म और विश्व मंच को एक आध्यात्मिक कड़ी से जोड़ा। अतः उनके समन्वयात्मक प्रयासों का और उनकी वाणी का सम्यक मूल्यांकन संकीर्ण सांप्रदायिक परिधि से बाहर हो कर ही संभव है।

इसके साथ साथ सामाजिक जीवन के महत्त्वपूर्ण व्यावहारिक प्रश्नों को भी उन्होंने सुलझाया। वे परिवर्तनकारी सामाजिक क्रान्ति में निमित्त रुप बने। धर्म के नाम पर फैले अंध-विश्वास, अस्पृश्यता, छुआ-छूत, जाति-पाति और ऊंच-नीच, भेदभाव, हिंसा, विविध प्रकार के व्यसनों में लिप्तता, स्त्री-वर्ग को होने वाले अन्याय, धार्मिक असहिष्णुता, दिखावे मात्र का धर्मपालन, कर्मकांडों की जड़ता, धार्मिक क्षेत्र में बाह्यआडंबर द्वारा शोषण आदि सामाजिक समस्याओं को सुलझाने का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने आज से ४०० वर्ष पूर्व की रुढ़िग्रस्त मिथ्या मर्यादाओं में जकड़े हुए समाज को नवचेतना प्रदान की, जिसकी आज के सामाजिक जीवन में और भी आवश्यकता है।

भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने भी अहिंसा आंदोलन और चरखे से क्रांति की प्रेरणा श्री प्राणनाथ जी के तारतम ज्ञान से अपने बचपन में अपनी माता जी पुतलीबाई के माध्यम से प्राप्त की थी। ऐसे अनेको विश्व के महान मानवतावादी विचारकों पर श्री प्राणनाथ जी के ज्ञान का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

इस पुष्प में श्री प्राणनाथजी की दिव्यवाणी की कुछ चुनी हुई चौपाईयां प्रस्तुत है, जो ब्रह्मज्ञान की महीमा प्रकाशित कर रही हैं।

साथियों ! इस तारतम वाणी के बल से ही १६७८ ई. (संवत १७३५) में हरिद्वार में महाकूंभ के पर्व पर महामति जी विजयाभिनन्द निष्कलंक बुद्ध के रुप में जाहिर हुए थे। इतना ही नहीं, मुगल सम्राट औरंगजेब के दरबार में सर्वधर्म समभाव का संदेश लेकर अपने बारह सुन्दरसाथ को भी भेजा और मुगल सम्राट को धर्म का सच्चा स्वरुप बताया साथ ही अनेकों हिन्दू राजाओं को भी ज्ञान से जाग्रत किया।

आखिर उन्हें मिले वीर बुन्देला छत्रसाल (१६४९-१७३१ जिन्होंने उनके संरक्षण में बुंदेलखंड में आदर्श आध्यात्मिक राज्य की स्थापना की और उसकी राजधानी पन्ना शहर(अेम.पी.) को वैश्विक आध्यात्मिक चेतना का केन्द्र बनाया।

साथियों ! हम सब बडे ही सौभाग्यशाली है, क्योंकि सृष्टि के इस वर्तमान समय में जीवों के आवागमन के दुःख और आत्माओं के निज-स्वरूप की विस्मृति के दुःख को हरने के लिए परब्रह्म की दिव्य शक्तियों से सुशोभित सर्वकल्याणी ब्रह्मविद्या रुपी देवी प्रकट हो चुकी हैं।

इस लघु पुस्तिका में इसी ब्रह्मविद्या की चुनी हुई मोतीरुप चौपाईयों के आधार पर जीवन के दो पहलू-सुख और दुःख की वास्तविकता पर प्रकाश डाला गया है। हमें विश्वास है कि प्रस्तुत ज्ञान का मनोमंथन आपके जीवन में दुःख के सकारात्मक स्योगदान को स्पष्ट कर देगा और आपके आध्यात्मिक विकास में सहायक होगा। तो आईये ! प्रियतम परब्रह्म के वचनों को अटल विश्वास के साथ अपने हृदय में धारण करें, दुःख तथा सुख का अंतिम रहस्य जान लें, दुःख के प्रसंगो में सुख ढूंढ लेने की युक्तियां समझ ले और इस तरह इसी जीवन में वास्तविक सुख निज-आनन्द की मस्ती लूटें।

साथियों ! ज्ञान और प्रेम तो बांटने से ही बढता है। अतः आज विश्व भर में करोडों लोग इस ब्रह्मज्ञान के मार्गदर्शन में स्वयं आत्मजाग्रति प्राप्त करके संसार को लाभान्वित करने की सेवा कर रहे हैं। श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान से प्रेरित साथी इसी सद्भावना से आप तक ब्रह्मवाणी के पुष्पों को लेकर पहूंचे हैं।

आपका जीवन इन पुष्पों की दिव्य से भर जाये और आप स्वयं भी इस महक को फैलाने में जुट जायें, हम यही हार्दिक मंगल कामना करते है।

आप के आत्मस्वरुप में कोटि-कोटि सप्रेम प्रणाम।

दुःख निवारण के उपाय

साथियों ! परिवर्तनशील जगत के दुःखों को नित्य सुखों में बदल देने का एक ही उपाय है - प्रियतम प्राणनाथ पर अनन्य श्रद्धा (ईमान)। श्रध्धा का शुद्धतम स्वरुप प्रगट हों इसके लिए अपने दैनिक जीवन में निम्न उपाय अपनाने का यथा संभव प्रयास करते रहना चाहिए:

१. निज स्वरुप, अपने अस्तित्व के मूल स्त्रोत सच्चिदानंद परब्रह्म और दिव्य धाम की लीला के सुखों की पहचान और उनका ध्यान।

२. विचारों में कृतज्ञता, नम्रता, सादगी, संयम, संतोष, धैर्य, त्याग, अहिंसा और करुणा के भाव रखें।

३. बोलचाल (कहनी) सत्य पर आधारित हों। अपमान जनक और कर्कशन हों, विचार-शून्य फिजुलगप्पे न हों।

४. रहनी(कर्म) आत्म-नियंत्रित हो। मन, वचन, कर्म से जीव हिंसा,चोरी, अप्रमाणिक जातीय सम्बन्ध न हों। कर्म दूसरों के अधिकारों के प्रति सजग रहकर किये गये हों।

५. जीवन व्यवसाय में हिंसक शस्त्र, प्राणी हत्या, गुलामी प्रथा, नशीले पदार्थों और जहर के व्यापार में सम्मिलित न हों।

६. ज्ञान का प्रकाश उसका अमल करने से ही होता है। अतः कर्मबंधन से मुक्त करने वाले और अंतःकरण का विकास करने वाले सेवा के प्रयोग करते रहें, उपलब्ध व्यवस्था के विकास और प्रसार में सहायभूत बनें।

७. विचार, वाणी और व्यवहार के प्रति सम्यक सजगता हों। शरीर, संवेदना, अंतःकरण और मन के विषयों के प्रति सदा जाग्रति हों।

८. ध्यान सदा सत्य, चेतन और आनंद में केंद्रित हों, ताकि अंतःकरण असत्य, जड़ और दुःखमयी विषयों से विचलित न हो।

इतना तो अवश्य याद रखिए !

- संसार दुःखमयी है, लेकिन तारतम ज्ञान के प्रकाश में हम अपने आत्म-चक्षु खोल कर दुःख में भी अखंड सुख ले सकते हैं। पसंदगी हमारी है।
- आत्म-विस्मृति ही दुःख का सब से बड़ा कारण है। आत्म-जागनी ही दुःखों के निवारण का एक मात्र उपाय है।
- दुःख की आशा-तृष्णा से चिपके रहोगे तो दुःख तुम्हें अवश्य ही सतायेगा। आत्मा के निज-सुख को याद (स्मरण-ध्यान) करते रहोगे, तो दुःख तुमसे दूर भाग जायेंगे।
- प्रियतम की मेहर को जानने वाली आत्मा दुःख में भी अखंड सुख लेती है,
- जिस दुःख से प्रियतम से मिलने का अवसर मिलता है, उस दुःख को खुशी से आमंत्रित करो।
- प्रियतम धनी के वचनों पर अटल श्रद्धा व अनुसरण से ही दुःख का सुख में परिवर्तन होगा।
- ज्ञान-विवेक की स्थिति में आत्मा दुःख को सुख में परिवर्तित कर देती है, प्रियतम परब्रह्म के विरह में तड़पती है, प्रेम सेवा चितवन में मग्न रहती है, प्रियतम के दिल के इश्क के महासागर से जुड़ जाती है और उनसे मिलन का सुख लेती है।
- विवेक के अभाव में दुःख में भी सुख की आशा बनी रहती हैं, ज्ञान होने के बाद भी दुःख के अभाव में विवेक नहीं हो पाता। विवेक हेतु ज्ञान के साथ साथ दुःख की भी आवश्यकता होती है।
- हृदय में विरह प्रगट हो जाने पर आत्मा को जुदाई का इतना दुःख होता है कि उसे एक क्षण अनेक युगों जितना लम्बा लगता है।
- प्रियतम के आवेश से अलग होने से आत्मा दुःख का अनुभव करती है। जैसे एक पति अपनी पत्नी के सभी दुःखों का निवारण करता है, उसी तरह दुःख रुपी माया से सर्व समर्थ प्रियतम परब्रह्म हमें बचा लेते हैं। हमें सिर्फ उनसे संबंध निभाना है।

।। मंगल कामना - सप्रेम प्रणामजी ।।